बीएएचआई-201

बी ०ए ०द्वितीय वर्ष

इकाई तीन- स्वातंत्रय पूर्व भारत में राष्ट्रवादी इतिहास लेखन
आर. सी. दत्त एवं दादाभाई नौरोजी

प्रस्तुतकर्ता

डॉ० एम०एम ०जोशी

इतिहास विभाग, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

उद्देश्य

इस इकाई में हम राष्ट्रवादी इतिहास लेखन तथा इसकी प्रमुख प्रवृत्तियों को समझने का प्रयास करेंगे. राष्ट्रवादी इतिहास लेखन आधुनिक राष्ट्रवादी विचारधारा से प्रभावित था, अत: इसका एक लक्ष्य राष्ट्रवादी चेतना का प्रसार रहा है. परंतु राष्ट्र की समझ को लेकर विद्वानों के मध्य अलग-अलग राय होने के कारण इस इतिहास लेखन मे हम विभिन्न धाराएँ पाते हैं. एक ओर उन इतिहासकारों की परम्परा है जिन्होंने भारतीय सांस्कृतिक उत्कृष्टता पर जोर दिया, दूसरी ओर वे लेखक जिन्होंने राष्ट्रवादी प्रचार के लिये औपनिवेशिक अर्थतंत्र को चुनौती दी. इन दूसरे लेखनों का प्रभाव भारतीय इतिहास लेखन में दूरगामी रहा है, अत: इन पर हम विशेष गौर करेंगे.

राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

साम्राज्यवादी इतिहास-लेखन नें यह साबित करने का यत्न किया था कि भारतीय अतीत में अधिकतर या तो राजनीतिक एवं प्रशासनिक अराजकता रही या एक प्राच्य-निरंकुशता. कुल मिलाकर साम्राज्यवादी इतिहासकारों नें यह दिखाने का प्रयास किया था कि भारतीय स्वशासन के अनुकूल नहीं हैं. राष्ट्रवादी इतिहासकारों ने साम्राज्यवादी इतिहास को चुनौती देते हुए भारतीय इतिहास से विपरीत प्रमाण देना आरम्भ किया. के. पी. जायसवाल ने अपने ग्रंथ हिन्दू पॉलिटी (1915) में प्राचीन भारत में गणतन्त्रों की उपस्थिति के प्रमाण दिये. कौटिल्य द्वारा रचित अर्थशास्त्र को आर. शामशास्त्री ने खोज निकाला और 1909 में संस्कृत में प्रकाशित किया. 1915 में उन्होंने इसका अंग्रेज़ी अनुवाद भी छाप दिया. राष्ट्रवादी लेखकों ने साहित्यिक स्रोतों की पुनर्व्याख्या करके यह दिखाने की चेष्टा की कि प्राचीन भारतीय संस्कृति एक महान संस्कृति थी. इस अन्धी दौड़ में अक्सर तथ्यों की सत्यता को भी नज़रअन्दाज़ कर दिया गया. इसप्रकार सांस्कृतिक राष्ट्रव्वदी इतिहास लेखन की परम्परा आरम्भ हुई.

क्रमश:

राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

भारत को एक राष्ट्र के रूप में चित्रित करनें के प्रयास में शक, कुषाण तथा हूणों के आक्रमणों को विदेशी आक्रमणों की भाँति पेश किया जाने लगा एवं मुग़ल शासकों को विदेशी आक्रांता. इसके विरोध में मुस्लिम इतिहासकारों नें तुर्क और मुग़ल शासकों की झूठी प्रशंसा आरम्भ कर दी. इस प्रक्रम में जदुनाथ सरकार द्वारा रचित हिस्ट्री ऑफ औरंगज़ेब सबसे प्रतिक्रियावादी साबित हुई. इसप्रकार साम्प्रादायिक इतिहास-लेखन के बीज पड़ना आरम्भ हो गये.

अनेक राष्ट्रवादी इतिहासकारों के लेखनों में मध्यकाल और मुस्लिमों के प्रति वैमनस्य की भावना झलकती थी, जो कहीं से भी ऐतिहासिक नही थी. राष्ट्रवाद का गॉधीवादी युग आते-आते इस प्रवृत्ति के इतिहास-लेखन की आलोचना होंने लगी. महात्मा गॉधी ने स्वयं भी विभाजनकारी साम्राज्यवादी इतिहास-लेखन को एक ख़तरे की भॉति देखा और भारत का सही इतिहास लिखने की प्रेरणा दी. गॉधीवादी राष्ट्रवाद से प्रभावित भारतीय इतिहासकारों ने धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन की नींव डाली. मध्यकालीन इतिहास को ग़ैर-साम्प्रादायिक ढंग से पुनर्विश्लेषित करने के प्रयास में ताराचन्द का इतिहास-लेखन सर्वोपरि था. अपनी पुस्तक इंफ्लुएंस आफ इस्लाम ऑन इंडियन कल्चर में उन्होंने मध्यकालीन इतिहास में हिन्दू-मुस्लिम समन्यवय को मुख्य विषय बनाया

क्रमश :

आर्थिक राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन

राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन की ऊपर वर्णित दो प्रवृत्तियों के अलावा तीसरी प्रवृत्ति आर्थिक राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन की थी. इस परम्परा मे दो नाम सर्वोपरि हैं – दादाभाई नौरोजी एवं आर. सी. दत्त – जिन्होंने साम्राज्यवादी अर्थव्यवस्था की गहन पड़ताल की थी. इनके अतिरिक्त महादेव गोविन्द रानाडे, दिनशा वाचा एवं जी. एस. अय्यर आदि ने भी ब्रिटिश साम्राज्यवाद के आर्थिक प्रभावों के शोषणकारी पहलुओं को उजागर किया था.

दादाभाई नौरोजी एवं आर्थिक दोहन का सिद्धांत

दादाभाई नौरोजी को हम उनके सर्वविदित लेखन दी पावर्टी एण्ड अनब्रिटिश रूल इन इंडिया (1876) से पहचानते हैं. इस ग्रंथ मे उन्होंने न केवल भारतीय गरीबी की चर्चा की बल्कि इसके लिये अंग्रेज़ो की आर्थिक नीतियों को भी जिम्मेदार ठहराया. 1870 में दादाभाई नौरोजी नें लन्दन में सोसाईटी ऑफ ऑर्ट्स की एक सभा में दी वांट्स एंड मीन्स ऑफ इंडिया शीर्षक से एक पत्र पड़ा. इसमें उन्होंने बताया था कि वर्तमान भारत अपनी आवश्यता के अनुपात मे उत्पादन करने में सक्षम नही है. फिर 1873 में दादाभाई नौरोजी ने भारतीय वित्त की एक कमेटी को भारतीय गरीबी के कारणों पर कुछ तर्क दिये. नौरोजी के यही लेख अंतत: पावर्टी में प्रकाशित हुए. नौरोजी ने आरम्भ से ही भारतीय गरीबी को अपने लेखों का मुख्य विषय बनाया.

क्रमश :

दादाभाई नौरोजी एवं आर्थिक दोहन का सिद्धांत

1895 में दादाभाई नौरोजी कहा कि भारत भूख से मर रहा है. वहीं 1900 तक वे भारतीयों की तुलना अमेरिकी गुलाम से करते हुए अमेरिकी गुलाम की दशा को एक भारतीय से बेहतर बता रहे थे. दादाभाई नौरोजी ने भारत की गरीबी को उत्पादन की कमी से जोड़ा जबकि इसी समय अंग्रेज़ लेखक इसे विशाल जनसंख्या से जोड़ रहे थे. जनसंख्या की वृद्धि एवं गरीबी के अंतर्सम्बन्द्ध को भी नौरोजी ने नकार दिया. उन्होंने तर्क दिया कि इंग्लैण्ड सहित पश्चिमी यूरोप के देशों की जनसंख्या भारत के मुकाबले कहीं तेजी से बढ़ी है तथापि उनकी भौतिक समृद्धि में वृद्धि हुई है. निष्कर्षत: नौरोजी ने न्यून उत्पादन को भारत की गरीबी का मुख्य कारण माना. इसप्रकार दादाभाई नौरोजी के विचार से तेज़ पूँजीवादी उत्पादन एवं औद्योगीकरण ही भारत की गरीबी दूर करने का एकमात्र समाधान हो सकता था.

क्रमश :

दादाभाई नौरोजी एवं आर्थिक दोहन का सिद्धांत

1876 में पावर्टी के लेखन तक दादाभाई नौरोजी ने 'दोहन सिद्धांत' को पूर्ण विकसित कर लिया था. अब नौरोजी ने दोहन सिद्धांत के प्रचार मे भी कोई कसर नही छोड़ी. अखबारों, भाषणों, अधिकारियों से पत्र-व्यवहार, विभिन्न कमीशनों एवं कमेटियों के समक्ष तथ्य प्रस्तुत करना आदि सभी नरमपंथी तरीकों को दादाभाई नौरोजी ने दोहन सिद्धांत के प्रचार का माध्यम बनाया. उन्होंने इसे भारत मे ब्रिटिश शासन का मूलभूत पाप बताया. साधारण: राष्ट्रवादी आर्थिक विश्लेषकों ने आयात-निर्यात के अंतर को सम्पत्ति के दोहन के रूप में देखा था. दादाभाई नौरोजी ने तर्क दिया कि भारतीय निर्यात की कीमत निर्यात बन्दरगाह पर तय की जा रही है, जिससे निर्यात का वास्तविक मूल्य कम हो जाता है और भारत को निर्यात का लाभ नही मिल रहा है. दादाभाई नौरोजी के विश्लेषण एवं प्रचार ने भारतीय राष्ट्रवाद के प्रारम्भिक चरण में आर्थिक दोहन को राष्ट्रवादी प्रचार का मुख्य हथियार बना दिया था. शीघ्र ही दूसरे राष्ट्रवादियों ने भी इसे मुद्दा बनाया. महादेव गोविन्द रानाडे ने 1872 मे पूना की एक सभा मे भाषण देते हुए भारतीय पूँजी एवं संसाधनों के दोहन की घोर निन्दा की तथा तर्क दिया कि भारत की राष्ट्रीय आय का एक-तिहाई से अधिक ब्रिटिश द्वारा ले जाया जा रहा है. 1873 में भोलानाथ चन्द्र ने कहा कि पहले तो कम्पनी भारतीय राजस्व का केवल एक हिस्सा ही ले जा रही थी, परंतु अब हज़ारों तरीकों से भारतीय धन लूटा जा रहा है.

आर. सी. दत्त एवं आर्थिक राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन

दो खण्डों में प्रकाशित इकॉनामिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया आर. सी. दत्त का सबसे उत्कृष्ट लेखन कार्य साबित हुआ. इसकी स्रोत सामग्री मुख्यत: सरकारी रिपोर्ट एवं संसदीय पत्र थे. इसप्रकार दत्त ने अपना लेखन मूलत: अंग्रेज़ अधिकारियों के लेखों एवं सरकारी आंकड़ों के आधार पर ही किया था. फिर भी, ब्रिटिशकाल की अर्थव्यवस्था लिखने का यह पहला सफल प्रयास था. इससे पहले न तो किसी ने ब्रिटिश अर्थव्यवस्था का इतिहास लिखा था, और न ही भारतीय गरीबी के ऎतिहासिक कारण जानने का प्रयास किया गया था. 1901-02 के मध्य लिखी गई इस पुस्तक में औपनिवेशिक भारत की अर्थव्यवस्था के लगभग सभी पक्षों – कृषि, उद्योग, वाणिज्य – को छूने का प्रयास किया गया था. फिर भी दत्त के अध्ययन का मुख्य केन्द्र ब्रिटिश भू-राजस्व नीतियाँ थीं. उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में लगातार पड़ने वाले भीषण अकालों ने गरीबी, भुखमरी और उत्पादन के सवाल को अहम बना दिया था.

क्रमश :

आर. सी. दत्त एवं आर्थिक राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन

दत्त ने माना कि भू-राजस्व नीतियों, जिसमें भूराजस्व की उच्च दरें शामिल हैं, के ही कारण कृषि दशा की दुर्गति हुई है, साथ ही यही भारतीय गरीबी का मुख्य कारण है. उच्च दर के कारण किसान लगातार अनाजों के स्थान पर गैर-खाद्य नगदी फसलें बोने के लिये बाध्य हो रहे थे. दत्त ने तर्क दिया कि चूंकि भारतीय जनसंख्या का एक बड़ा भाग कृषि पर निर्भर है अत: कृषि की दशा मे लगातार गिरावट से साल दर साल अनाज की कमी होती गयी है. उन्होंने अनाज के उत्पादन मे गिरावट को अकालों का मुख्य कारण भी बताया. औपनिवेशिक भू-राजस्व नीतियों के अलावा आर. सी. दत्त ने भारतीय हस्तशिल्प उद्योग के पतन को भी ब्रिटिश नीतियों का दुष्परिणाम बताया. उन्होंने पतन की ऐतिहासिक प्रक्रिया का अध्ययन करते हुए बताया कि सदियों से भारत के औद्योगिक उत्पादन (हस्तशिल्प उत्पादन) का एशिया और यूरोप मे बड़ा बाजार था और ये उत्पादन अनेक देशों को भेजे जाते थे. यही नही बल्कि कताई, बुनाई एवं दूसरे हस्तशिल्पों में हज़ारों भारतीयों को रोज़गार भी मिलता था. दत्त ने दावा किया कि ब्रिटिश शासन की स्थापना के पश्चात भारत ने धीरे-धीरे न केवल विदेशी बाजार खो दिये बल्कि देश के आंतरिक बाजार भी उसके हाँथ से निकल गये. आर. सी. दत्त ने बताया कि भारतीय अर्थव्यवस्था को ब्रिटिश उद्योगों का गुलाम बनाने के लिये भारत को कच्चा माल का उत्पादक एवं ब्रिटिश उद्योग के बाजार की भाँति विकसित किया जा रहा है. इसप्रकार दत्त ने परम्परागत भारतीय हस्तशिल्प के पतन को ब्रिटिश आर्थिक नीतियों से जोड़कर देखा.

आर्थिक राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन का विश्लेषण

राष्ट्रवादी नेताओं ने इन आर्थिक विश्लेषणों को राष्ट्रवादी प्रचार का मुख्य हथियार बनाया. न केवल आरम्भिक राष्ट्रवादियों बल्कि महात्मा गाँधी ने भी भारतीय हस्तशिल्प के पतन एवं सम्पत्ति के दोहन को भारत मे राष्ट्रवाद के प्रचार का मुख्य माध्यम बनाया. यदि ये अध्ययन न होते तो संभवत: 'स्वदेशी एवं बहिष्कार' की रणनीति का जन्म ही न होता. महात्मा गाँधी ने विदेशी कपड़ों के बहिष्कार को महत्वपूर्ण मुद्दा बनाकर राष्ट्रीय आन्दोलन को एक जनआन्दोलन मे तबदील कर दिया. इन आरम्भिक आर्थिक अध्ययनों के महत्व को कम करके नही आंका जा सकता क्योंकि इन्होंने भारत में आर्थिक इतिहास लेखन की एक परम्परा डाली. कालांतर मे भारतीय इतिहासकारों – जिसमें मुख्यत: मार्क्सवादी इतिहासकार थे – ने औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के विभन्न पहलुओं पर उत्कृष्ट इतिहास-लेखन किया है.

सारांश

उपर हमने स्वतंत्रता-पूर्व राष्ट्रवादी इतिहास लेखन की विभिन्न प्रवृत्तियों की चर्चा की है. हमने देखा कि राष्ट्रवादी इतिहास लेखन का उदय औपनिवेशिक इतिहास लेखन की गलत धारणाओं को ख़ारिज करने के लिये हुआ. इसका मुख्य लक्ष्य भारत में राष्ट्रवादी प्रचार भी था. राष्ट्रवादी इतिहास लेखकों के एक वर्ग ने प्राचीन भारतीय संस्कृति की उत्कृष्टता पर जोर दिया. इनके लेखन को हम सांस्कृतिक राष्ट्रवादी इतिहास लेखन की श्रेणी में रख सकते हैं. इस परम्परा के स्पष्ट खतरे सामने आए क्योंकि इसने कालांतर मे साम्प्रदायिक इतिहास लेखन को सामग्री उपलब्ध कराई. गाँधीवादी राष्ट्रवाद के उदय के साथ ही राष्ट्रवादी इतिहास लेखन की उदार परम्परा का आरम्भ हुआ. इस परम्परा ने राष्ट्रीय एकता को इतिहास लेखन के मुख्य उद्देश्य के रूप में देखा. तीसरी परम्परा आर्थिक इतिहास लेखन के रूप में आरम्भ हुई. इस परम्परा के लेखकों ने बिटिश औपनिवेशिक शोषण को अपने लेखनों का मुख्य बिन्दु बनाया तथा ब्रिटिश राज की भारत मे उपस्थिति के ब्रिटिश उद्देश्यों पर सवालिया निशान लगाए. इन तीनों ही परम्पराओं ने भारत मे राष्ट्रवादी इतिहास लेखन की नीव रखी.